उपसंहार

प्रख्यात आलोचक प्रभाकर श्रोत्रिय जी नाटककार की अपेक्षा समीक्षक के रूप में जाने जाते हैं। हिंदी आलोचना में श्रोत्रिय जी को आलोचक के रूप में अधिक विश्वसनीय माना जाता है। कहते हैं कि साहित्यकार का व्यक्तित्व उसके साहित्य में छिपा होता है। उसके व्यक्तित्व के कई पहलू उसके सृजन में पाए जाते हैं। आलोचक के रूप में श्रोत्रिय जी को कई सम्मान प्राप्त हैं। हिंदी कविता और कवियों की आलोचना आपने अधिक मात्रा में की है। इसमें प्रसिद्ध छायावादी कवि जयशंकर प्रसाद के काव्य पर चर्चा है। इसके अलावा शिवमंगलसिंह 'सुमन', मैथिलिशरण गुप्त आदि कवियों का समग्र विवेचन उन्होने किया है। आलोचक के अलावा श्रोत्रिय जी ने अनेक पत्रिकाओं का संपादन भी किया है इसमें 'वागर्थ', 'साक्षात्कार', 'अक्षरा' एवं 'नया ज्ञानोदय' आता हैं। श्रोत्रिय जी ने कुछ वर्षों तक भारतीय ज्ञानपीठ के निदेशक के रूप में भी काम किया है। श्रोत्रिय जी के तीनों नाटक समाज में स्थित बुराईयों का पर्दाफाश करते हैं। इनमें नारी की समस्याओं का विवरण तथा राजनेताओं पर कड़ा प्रहार किया है।

श्रोत्रिय जी का व्यक्तित्व एक प्रसिद्ध साहित्यकार की अपेक्षा सीधे-सादे आदमी जैसा प्रतीत होता है। जिस प्रकार वे बाहर से दिखते है उसी प्रकार उनका अंतरंग भी दिलचस्प है। किसी बड़े आदमी से मिलने से जो आनंद मिलता है उससे अधिक उनको अपने शिष्यों से मिलना है। श्रोत्रिय जी का बचपन गरीबी में गुजरा। वास्तविक रूप से सधन परिवार में उनका जन्म हुआ परंतु बारह साल की उम्र में ही उनके पिताजी जो एक संस्कृत विद्यालय के प्रधानाचार्य थे चल बसे। इसी कारण उन्हें कम उम्र में ट्युशने लेनी पड़ी। श्रोत्रिय जी का मानना है कि कठिनाईयों के कारण व्यक्ति जीवन में उन्नति कर सकता है। इसी तरह उसका जीवन भी कठिनाईयों के बीच व्यतीत हुआ है। शिक्षा पूरी होने के बाद वे अधिव्याख्याता के रूप में कार्य करने लगे यहीं से उनका आलोचक रूप विकसित हुआ है। जो आगे चलकर प्रख्यात आलोचक एवं प्रखर समीक्षक माने गए हैं।

श्रोत्रिय जी को संप्रति हिंदी आलोचना में अधिक विश्वसनीय आलोचक माना जाता है। उपन्यास, नाटक, निबंध की अपेक्षा काव्य कृतियों की आलोचना करना उन्हें अधिक पसंद है। उनकी आलोचना पर मार्क्सवाद का प्रभाव दिखाई देता है पर वे मार्क्सवाद के आग्रही नहीं है। उन्हें पता है कि गांधी जी के इस देश

में मार्क्सवाद पनपना इतना आसान नहीं है। आलोचक के रूप में उनका सबसे स्पृहणीय कार्य है - जयशंकर प्रसाद, मैथिलिशरण गुप्त, शिवमंगलसिंह 'सुमन', सूरदास आदि कवियों के काव्य का मूल्यांकन। इसके साथ-साथ उन्होने प्रेमचंद, धर्मवीर भारती, रामविलास शर्मा, नरेश मेहता आदि महत्त्वपूर्ण साहित्यकारों का मूल्यांकन करने का सफल प्रयास किया है। हिंदी की स्थिति को उन्होने हिंदी कल आज कल नामक किताब में स्पष्ट किया है। इस प्रकार आलोचक के रूप में श्रोत्रिय जी ने अपनी भूमिका निड़रता से स्पष्ट की है।

श्रोत्रिय जी ने अब तक तीन ही नाटक लिखे हैं 'इला', 'साँच कहूँ तो' और 'फिर से जहाँपनाह'। उनके तीनों नाटकों के विषय अलग-अलग रहे हैं। पहले दो नाटकों में नारी की समस्याओं को चित्रित किया है तथा तीसरे नाटक में भारतीय लोकतंत्र एवं राजनेताओं पर प्रहार किया है। श्रोत्रिय जी का प्रथम नाटक 'इला' आधुनिक नाटक साहित्य में एक नया प्रयोग है। नारी की समस्याओं को अत्यंत वास्तविकता से प्रकट किया गया है। 'साँच कहूँ तो' इस नाटक में भी अनमेल विवाह एवं बालविवाह जैसी समस्याओं को चित्रित किया गया है। श्रोत्रिय जी को हमारा लोकतंत्र निकम्मा नजर आता है। इसी लोकतंत्र को चलानेवाले राजनेताओं का चरित्र कितना भ्रष्ट है इसका भी चित्रण उन्होने किया है। इस प्रकार श्रोत्रिय जी नाटककार के रूप में भी सफल हुए हैं।

श्रोत्रिय जी के नाटकों के कथ्य का विवरण सबसे पहले किया गया है। इसमें 'इला', 'साँच कहूँ तो' और 'फिर से जहाँपनाह' इन नाटकों की कथावस्तु संक्षेप में बताई है। इसके साथ नाटकों में चित्रित समस्याओं का चित्रण विस्तार से किया है। 'इला' नाटक एक मिथक कथा पर आधारित है। राजा मनु और श्रद्धा से संबंधित प्रस्तुत कथा आधारित है। पुत्रप्राप्ति हेतु राजा मनु मुनि वशिष्ठ की सहायता से पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाते हैं मगर वशिष्ठ मुनि के शिष्य विद्याधर की गलति से पुत्र की अपेक्षा पुत्री की कामना की जाती है और उनको पुत्री प्राप्त होती है। इस पुत्री का परिवर्तन मनु वशिष्ठ जी की सहायता से पुत्र में करते हैं और फिर इस पुत्र (सुद्युम्न) को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसका चित्रण प्रस्तुत नाटक में किया गया है। 'साँच कहूँ तो' राजस्थानी में लिखा काव्य 'बीसलदेव रासो' पर आधारित है जिसमें मध्यकालीन व्यवस्था का चित्रण राजा बीसलदेव की सहायता से किया गया है। प्रस्तुत नाटक राणी राजमती की समस्याओं का चित्रण करता है। राजमती का विवाह बीसलदेव से कम उम्र में ही किया जाता है। राजमती वाचाल है उसी के फलस्वरूप राजा बीसलदेव उस पर नाराज होकर उड़ीसा राज्य की ओर धन की अपेक्षा से चला जाता है जो लगभग ग्यारह सालों तक वापस नहीं आता। इसमें राजमती के विरह का चित्रण किया गया है। श्रोत्रिय जी का तृतीय नाटक 'फिर से जहाँपनाह' राजनीति एवं राजनेताओं से संबंधित

है। प्रस्तुत नाटक के पहले अंक में 21 वीं सदी का तथा दूसरे अंक में 18 वीं सदी का चित्रण किया गया है। नाटककार ने प्रथम अंक में अनंत चक्रवर्ती, त्यागमूर्ति, मंगलम आदि राजनेताओं द्वारा आज के उन राजनेताओं की खिल्ली उड़ाई है जो देश की अपेक्षा खुद का पेट भरने के पीछे लगे रहते हैं। दूसरे अंक में 18 वीं सदी का चित्रण किया गया है जिसमें आदमशाह के द्वारा उन तानाशाहों का चित्रण किया है जो अंत में उन्हीं लोगों के द्वारा मारे जाते हैं जिन्हें वे अपना समझते हैं। प्रस्तुत नाटक द्वारा नाटककार यह स्पष्ट करना चाहता है कि सत्ता बदलने से सत्ताधिशों की मानसिकता नहीं बदल सकती। इस प्रकार दूसरे अध्याय में कथावस्तु की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है।

लघु-शोघ प्रबंध में 'मंचीयता' को लेकर विवरण किया है। श्रोत्रिय जी के तीनों नाटक मंचीयता को ध्यान में रखकर ही लिखे गए हैं। श्रोत्रिय जी ने तीनों नाटकों में पौराणिक एवं मध्यकालीन परिवेश का चित्रण किया है। इसके चलते नाटक में वनों, बगीचों, राजमहलों का चित्रण आना स्वाभाविक है। 'इला' में श्रोत्रिय जी ने एक मंच की योजना की है। जिस पर वनों का माहौल तैयार करने हेतु संगीत द्वारा तथा दीवारों पर वनों के चित्रोंवाले परदों द्वारा परिवेश की निर्मिती की है। दृश्य-सज्जा, वेशभूषा एवं रूप-सज्जा, अभिनेतयता, प्रकाश योजना, ध्वनि एवं संगीत आदि मंचीयता के अंगों का बारीकी से प्रयोग किया है। 'साँच कहूँ तो' यह श्रोत्रिय जी का दो मंचों वाला नाटक है जिसमें निचले मंच से ऊपरी मंच की ओर जाने के लिए एक रपटा खड़ा किया गया है। वास्तविकता यह नाटककार की निर्मिति है जिसे निर्देशक ने अंतिम रूप दिया। प्रस्तुत नाटक भी मंचीयता की दृष्टि से संपृक्त है।

'फिर से जहाँपनाह' इस नाटक में दो अंकों में दो अलग परिवेशों काचित्रण किया गया है। इसी कारण अंतराल के बाद अचानक परिवेश बदलने के कारण दर्शक आश्चर्यविभोर हो उठते हैं। प्रस्तुत नाटक में नाटककार ने मंचीयता के सभी अंगों का अंतर्भाव किया है। इस प्रकार श्रोत्रिय जी के तीनों नाटक मंचीयता की दृष्टि से संपृक्त हैं।

अंत में श्रोत्रिय जी के नाटकों के शिल्प के बारे में चर्चा की है। इसमें शैल्पिक तत्त्वों के आधार पर तीनों नाटकों का मूल्यांकन किया है। सबसे प्रथम कथावस्तु का सार दिया है। तीनों नाटकों के पात्रों की विशेषताओं का विवरण किया है। श्रोत्रिय जी ने पुरुष पात्रों की अपेक्षा स्त्री पात्रों का चरित्र-चित्रण अत्यंत मार्मिकता से किया है। प्रथम नाटक का पात्र - 'इला', 'साँच कहूँ तो' की राजमती का चित्रण सफलता से किया है। इसके साथ गौण पात्रों का भी चित्रण उतनी ही सतर्कता से किया है। नाटकों के संवाद अनेक प्रकार के हैं इसमें स्वगत, हास्यास्पद, काव्यात्मक, लम्बे आदि का अंतर्भाव होता है। इला में पुराणकालीन परिवेश का चित्रण है। 'साँच कहूँ तो' में मध्यकालीन परिवेश तथा 'फिर से जहाँपनाह' में आधुनिक तथा

मध्यकालीन परिवेश का चित्रण हुआ है। तीनों नाटकों में काव्यात्मक, वर्णनात्मक, चुटकिली भाषा का प्रयोग हुआ है। 'साँच कहूँ तो' की भाषा में राजस्थानी भाषा के शब्द एवं लोकगीतों का समावेश है। इस प्रकार श्रोत्रिय जी के नाटकों के शिल्प को लेकर चर्चा की है।

अतः यह स्पष्ट होता है कि 'इला', 'साँच कहूँ तो' तथा 'फिर से जहाँपनाह' इन नाटकों के योगदान से श्रोत्रिय जी को हिंदी नाटक साहित्य में अलग महत्त्व प्राप्त हुआ है।

उपलब्धियाँ :-

1. श्रोत्रिय जी के नाटकों के अधध्ययन के बाद यह स्पष्ट होता है कि नारी के प्रति उनके प्रति अगाध करूणा छुपी हुई है।

2. भारतीय लोकतंत्र के प्रति श्रोत्रिय जी के मन में निराशा के भाव हैं।

3. राजनेताओं का चरित्र उन्हें भ्रष्ट नजर आता है।

4. श्रोत्रिय जी नवयुवकों के प्रति आस्थाशिल है।